International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

मानवीय चेतना और आस्था के कवि : पंडित भवानी प्रसाद मिश्र

डॉ. स्मिता जैन, एसोसिएट प्रोफेसर,
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, एच.डी. जैन कॉलेज, आरा

'स्वयमुत्पादितानेकचिन्ताशताकुला कविमतिरिव तरलता न किंचिन्नोत्प्रेक्षते'[1] –वाणभट्ट ने कादम्बरी के अनुवाक् 198 में इन पंक्तियों के माध्यम से यह घोषित कर दिया है कि कवि जब तरंगायित होकर चिन्तन करता है तो ऐसी कौन सी कल्पना है जो उसकी परिधि से बाहर रह जाती हो। उसके कल्पनालोक में मानो सारा जगत् साकार हो उठता है। उस अपूर्व और अद्‌भुत अनुभूति का संकेत मात्र है कविता। सहृदय पाठक इन्हीं संकेतों के सहारे उस दिव्य अनुभूति तक पहुँचने का प्रयास करता है।

सच तो यह है कि प्रत्येक कलाकार अपनी दृष्टि लेकर साहित्याकाश में उदित होता है, अपनी मौलिकता को लेकर समादृत होता है, अपनी संचेतना के अनुरूप विषय–वस्तु का निर्वाह करता है और अपनी कलाकारोचित क्षमता के अनुरूप शिल्प ग्रहण करता है। युग के प्रति सजग–सचेष्ट कवि युगीन परिस्थितियों से संस्कार ग्रहण कर उसे नयी दीप्ति प्रदान करता है। छायावादोत्तर हिन्दी काव्य–लेखन के सशक्त हस्ताक्षर पंडित भवानी प्रसाद मिश्र भी एक ऐसे ही सजग–सचेष्ट एवं सहज संवेदना के कवि हैं। मिश्रजी से छायावादोत्तर काव्य को एक साथ ही विस्तार और उच्चता प्राप्त हुई। मानवीय चेतना एवं आस्था की सशक्त अभिव्यक्ति ही उनके लेखन का उपजीव्य बनी रही है। एक ओर जहाँ उनकी कविताओं में युग–जीवन का सत्य झलकता है तो दूसरी ओर कवि का आत्म–सजग व्यक्तित्व भी कम मायने नहीं रखता। उनके व्यक्तित्व और काव्य की विशेषता अथक सृजनशीलता और लेखन के प्रति उनके दृष्टिकोण में निहित है।

पं. भवानी प्रसाद मिश्र का रचनाकाल सन् 1930 से सन् 1985 तक विस्तृत है। अपनी सुदीर्घ काव्य–यात्रा के अन्तर्गत जीवन के अनेक संदर्भों एवं परिवेशों को काव्योचित अभिव्यक्ति देने का उनका प्रयास सराहनीय कहा जा सकता है। 'गीतफरोश' से अपनी काव्य–यात्रा आरंभ कर 'नीली रेखा तक' सोलह काव्य–संग्रहों का प्रणयन करते हुए उन्होंने हिन्दी काव्य–जगत् को महत् गौरव पदान किया है। इनमें 'गीतफरोश' (1956), 'चकित है दुःख' (1968), 'गाँधी–पंचशती' (1969), 'बुनी हुई रस्सी' (1971), 'खुशबू के शिलालेख' (1973), 'परिवर्तन जिये' (1976), 'अनाम तुम आते हो' (1976), 'इदं न मम' (1977), 'त्रिकालसन्ध्या' (1978), 'शरीर कविता फसलें और फूल' (1980) आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। इन संग्रहों से पूर्व उनकी ग्यारह कविताएँ सन् 1951 में अज्ञेय द्वारा सम्पादित 'दूसरा सप्तक' में प्रकाशित हो चुकी थीं। वे कविताएँ हैं–कमल के फूल, सतपुड़ा के जंगल, सन्नाटा, बूँट टपकी एक नभ से, मंगल वर्षा, टूटने का सुख, प्रलय, असाधारण, स्नेह शपथ, गीतफरोश, वाणी की दीनता आदि।

संवेदना के जगते ही उनकी कल्पना के पंख खुल जाते थे जिसमें मुख्य बात विशिष्ट परिस्थितियों में जीवन की उनकी पकड़ रहती थी–जीवन जैसा कि मिश्र जी उसे देखते और समझते थे। अपनी कविता के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है–

"मैं कविता को नहीं, बल्कि कविता मुझे लिखती है,
'त्रिकाल सन्ध्या', वह ही मुझसे सदा बड़ी दिखती है,
'चरैवेति' का मंत्र सदा जीवन में साध उतारा,
चला नहीं मैं फिर भी कविता तो चलती रहती है।"

विचारों, संस्कारों और अपने कार्यों से पूर्णतः गाँधीवादी मिश्रजी की कविताओं का प्रमुख गुण कथन की सादगी है। गाँधीवाद की स्वच्छता, पावनता और नैतिकता का प्रभाव तथा उसकी झलक उनकी कविताओं में स्पष्टतया परिलक्षित होती है। उनकी भाषा भी गाँधीजी की इच्छा क अनुरूप सीधी–सादी, सरल हिन्दुस्तानी ही थी। बहुत

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हल्के–फुलके ढंग से वे बहुत गहरी बात कह देते थे। उनकी कविता में विचार और संवेदना हिन्दी भाषा की स्वाभाविक लय में निहायत सादगी और सरलता के साथ व्यक्त होती थीं। जब जैसी भावानुभूति होती तब उसे निर्मुक्त लेखनी से उस भावना को सहज भाव से बेबाक कर देते। यह उनके ईमानदार कवि का जीवन्त स्वरूप ही व्यंजित करता है। उन्होंने अपनी इस भावना–संवेदना को स्थान–स्थान पर अपनी कविताओं में रेखांकित भी किया है। 'कवि' नामक कविता में उन्होंने लिखा है कि–

"कलम अपनी साध
और मन की बात बिल्कुल ठीक कह एकाध
यह कि तेरी भर न हो तो कह,
और बहते बन सादे ढंग से तो बह।
जिस तरह हम बोलते हैं, उस तरह तू लिख,
और इसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख...।"[2]

इसका सीधा–सा अभिप्राय है कि उनकी कविता सहज भाव से व अनायास उभरती और बढती मालूम पड़ती है। मिश्रजी ने अपनी कविता को अपनी भोगी हुई अनुभूतियों से सजाया और सँवारा है। सच्चे कवि की अनुभूतियाँ ही उसके काव्य का प्राण होती है। उन्होंने जीवन और जगत् को जैसा देखा है अपनी कविताओं में वैसा ही रूपायित किया है। मिश्रजी आम आदमी के कवि हैं इसलिए उन्होंने अपने काव्य की भाषा भी आम बोलचाल की ही रखी है जिसमें गजब की सहजता है। उनकी भाषा आधुनिक संदर्भों में लिपटी भारतीय संस्कृति के अन्तःकरण से निकलकर स्वच्छ, निर्मल जल की तरह बहती है जिसके प्रवाह में घुलकर स्वच्छता भी स्वच्छ हो गयी है। 'शब्द के महल' कविता में कवि ने शब्दों के सही चुनाव तथा शब्दों की सार्थकता को स्पष्ट करते हुए कवि के सही दायित्व को दर्शाया है। यहीं पर कवि की संवेदनात्मक भाव–भूमि उजागर होती है। अनुभूति और अभिव्यक्ति में अद्वैत की महत्ता को कवि ने इस प्रकार स्पष्ट किया है–

"याने अब मैं और मेरे शब्द,
अलग–अलग नहीं हैं, एक हैं,
मैं चाहता हूँ
कि कभी शर्म न बनूँ
क्योंकि वे मेरी टेक हैं।"[3]

विचारों से गाँधीवादी होने के बावजूद उनका कवि हृदय किसी वाद के खाँचे में बँधा हुआ नहीं था। यही कारण है कि वे मानववादी कवि बने रहे। उनकी कविता घरेलू विषयों से लगकर आध्यात्मिकता के शिखरों तक का भ्रमण करती है। मिश्रजी की सभी कविताएँ बहुआयामी होने के साथ–साथ उनकी उत्कट काव्य–प्रतिभा की परिचायक भी हैं। 'कमल के फूल', 'वाणी की दीनता', 'टूटने का सुख' आदि में कवि की संवेदना बहुत सूक्ष्म और आत्मगत है तो 'सतपुड़ा के जंगल', 'सन्नाटा', 'गीतफरोश' आदि कविताओं में प्रत्यक्ष और परिवेश संयुक्त है। 'बूँट टपकी एक नभ से' और 'मंगल वर्षा' कविताएँ सुकुमार भावों एवं शृंगार तथा सौन्दर्य चेतना के आवरण में प्रेम की मार्मिक अनुभूति का नैसर्गिक प्रकाशन करती हैं। 'असाधारण' कविता साधारण में असाधारण की तलाश है तो 'स्नेह–शपथ' टूटते–जीवन–मूल्यों और परिवेशगत संक्रमणशीलता को सामाजिक संदर्भो में रेखांकित करने का प्रयास है। 'गीतफरोश' में यदि देश–समाज की समसामयिक स्थिति पर करारा व्यंग्य है तो 'गाँधी पंचशती' में पीड़ित जग को पीड़ामुक्त होने का गुरुमंत्र दिया गया है। 'खुशबू के शिलालेख' में परिवेशगत सन्दर्भों को एक नयी दिशा देने के लिए शब्द, वाक्य और ध्वनि को संजोकर कवि ने 'कविता के शिलालेख' खड़े किये हैं तो 'त्रिकाल–सन्ध्या' में सरकार की दमनात्मक नीति का घोर विरोध करते हुए जनमानस में लोककवि के रूप में उपस्थित हुए हैं। 'अनाम तुम आते हो' काव्य–संग्रह की कविताओं में जहाँ कवि अध्यात्म, दर्शन तथा नैतिकता में डूबा हुआ है वहीं 'परिवर्त्तन जिए' में वह फिर अपने समकालीन परिवेश के प्रति जागरूक हुआ है। 'इदं न मम' में कवि के संवदेनशील मन की अभिव्यक्ति है तो 'कालजयी' में मंगलकारी मानव–मूल्यों की स्थापना हुई है। प्रेम, करुणा, शान्ति, विश्व–बंधुत्व जैसे उच्चतम मानव मूल्यों की स्थापना करना ही यहाँ कवि का लक्ष्य रहा है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

'दूसरे सप्तक' की प्रायः सभी कविताआ में मिश्रजी की 'गीतफरोश' कविता अत्यनत चर्चित रही है। बाद में 'गीतफरोश' नाम से ही उनका पहला काव्य–संग्रह भी प्रकाशित हुआ। गाँधीवाद की ईमानदारी की साफ–साफ अभिव्यक्ति उनके इस संग्रह में हुई है। अंतिम कविता पर संग्रह का नामकरण हुआ है। इसी 'गीत फरोश' कविता के कारण उन्हें विशेष ख्याति मिली। एकालाप नाटकीय कथोपकथन का विलक्षण आकर्षण और माधुर्य समेटे हुए यह कविता एक प्रकार से आज के युग पर एक तीखा व्यंग्य है। यह रचना आज के पाठक की गिरती रुचि और काव्य के मूल्यों की डाँवाडोल स्थिति की सूचक है। कवि को खद है कि सत्य को उसके सर्वाधिक संभव रूप में प्रत्यक्ष करानेवाले काव्य की आज की समाज–व्यवस्था में क्या दशा है? जीवन की विडम्बना, काव्य की राजनीति की अनुगामिता, कवि की विवशता, शोषण, कला और साहित्य के मूल्यांकन की विद्रूपता आदि पर उन्होंने कसकर व्यंग्य किया है। कवि का करुण आक्रोश बड़े ही गहरे स्तर पर उभरा है। इस कविता में कवि ने अपने फिल्मी दुनिया में बिताये समय को याद कर कवि के गीतों का विक्रेता बन जाने की विडम्बना को मार्मिकता के साथ कविता में ढाला है। तीव्र व्यंग्यात्मकता के साथ–साथ कवि की बेबसी का एक करुण स्पर्श इस कविता को मार्मिक और हृदय–स्पर्शी बना देता है–

"है गीत बेचना वैसे बिल्कुल पाप–
क्या करूँ मगर लाचार
हारकर गीत बेचता हूँ
जी हाँ, हुजूर, मैं गीत बेचता हूँ
मैं तरह–तरह के गीत बेचता हूँ
मैं किसिम–किसिम के गीत बेचता हूँ।[4]

सृजन की भावुकता और जीवन की व्यवहारिकता के बीच की कशमकश को इस बेबाकी से प्रस्तुत करना भवानी प्रसाद मिश्र जैसे निश्छल व्यक्ति के द्वारा ही संभव था। प्रभावपूर्ण शैली, निष्कपट बेबाकी, सत्य के उद्घाटन की अदम्य क्षमता तथा काव्य की मर्यादा का अनुपालन ही वे बातें हैं जो उन्हें अन्य कवियों से अलग करती है। उनका प्रथम संग्रह 'गीत–फरोश' विशिष्ट शैली, नवीन उद्भावनाओं एवं नये पाठ–प्रवाह के कारण अत्यन्त लोकप्रिय हुआ।

प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करने वाले कवियों में मिश्रजी का प्रमुख स्थान है। इनकी रचनाओं में प्रकृति और ग्रामीण वायुमण्डल का अच्छा निखार हुआ है। कवि प्रकृति के सौन्दर्य की ओर आकृष्ट हुआ है और उसने संवेदनशील उपकरणों को भावना के रंगों से रंगकर ऐसे सांगोपांग चित्र दिए हैं जो एकबारगी हमारी कल्पना को रंगीन बनाने में पूर्ण समर्थ हैं। 'पहला पानी', 'नर्मदा के चित्र', 'आषाढ़', 'मेघदूत', प्रिय लालाजी', 'अज्ञात पंछी' तथा 'सतपुड़ा के जंगल' आदि प्राकृतिक सौन्दर्य को उकेरनेवाली रचनाएँ हैं। कोयल की मधुर तथा रस घोलनेवाली आवाज सुन कवि भावविभोर हो गा उठता है–

"तू मुझे दिखती नहीं कुहू मगर सुन पा रहा हूँ,
वहीं रहना पर भृंत मैं भी वहीं पर आ रहा हूँ
आकाशवाणी–सा तुम्हारा गीत जग में भर गया है
मुझे पागल कर गया है।[5]

कविताएँ चाहे हरीतिमा की छाँह में लिखी गई हों अथवा नर्मदा के तट पर बैठकर, सभी में कवि की मानवता के प्रति दृढ़ आस्था और प्रकृति के प्रति तीव्र ललक के दर्शन होते हैं। उन कविताओं में भारत की सांस्कृतिक चेतना भी अनेक रूपों में जैसे मुखरित हो उठी है। सांस्कृतिक चेतना के संवाहक के रूप में भवानी जी अत्यन्त प्रिय मालूम पड़ते हैं। देश की सोंधी मिट्टी से रस लेकर ही कवि मानो उन्मुक्त भाव से रस को लुटा देने की मस्ती भी खूब रखता है। भारतीय संस्कृति के रीति–रिवाजों से सम्बन्धित प्रतीकों का प्रयोग कर कवि बदलते परिवेश में प्राचीन जीवन–मूल्यों के प्रति आस्था व्यक्त करता है–

"धूप चढ़ती है, कि पनघट जग गया है,
एक छोटा सा कुंआ है, फब गया है,

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

तरुणियाँ हैं घाट पर सहमी झुकी हैं,
और बधुएँ हैं 'घूँघट' में लुकी हैं,
हँस कभी पड़तीं कभी कुछ बोलती हैं,
यह हँसी दुःख में सनी है, खोखली है।[6]

यहाँ भारतीय संस्कृति अपने ग्रामीण सौष्ठव को अभिव्यक्त करने में समर्थ हुई है। प्राकृतिक उपादानों को लगातार नष्ट किये जाने के कारण पर्यावरण का संकट आज तेजी से बढ़ा है। कवि–हृदय इस दुरावस्था से आहत हो उठता है। बढ़ते ध्वनि प्रदूषण से क्षुब्ध होकर उनका स्वर विशेष व्यंग्यात्मक बढ़ते हो उठता है–

"ऋतुएँ अगर आती भी यहाँ
तो वे शोर में / अपने गीत
क्या खाकर गातीं
इसलिए अच्छा ही है
कि प्रकृति यहाँ नहीं बची
ऋतु और प्रकृतिहीनता में
पले ये शहर
काट रहे हैं / चीजों के बीच
अपनी शाम।[7]

आज जंगल उजाड़े जा रहे हैं। कवि के विचार में इसके फलस्वरूप पर्यावरण के साथ–साथ हमारी सांस्कृतिक चेतना का भी क्षरण हो रहा है–

"नगाड़े, नाच और रात
कब से नहीं सुने देखे
देखना सुनना हो तो
कहाँ जाएँ?
अब कहाँ है?
जंगल में मंगल
बल्कि कहो
कहाँ है जंगल
कहाँ है मंगल।[8]

कवि तथा उनकी कविता धरती से जुड़े हैं। धरती की महिमा तथा आकर्षण उनका संबल है। वे इसी कारण भाव–विभोर होकर लिख सके हैं–

"कोई माँज रही है / अपना पीतल का घड़ा
रेत मिली माटी से / चमका रही है कोई
ताँबे की डोलची / बातें भी चल रही है
आँखे भी उनकी / एक दूसरे की तरफ
उठती–गिरती ऐसी जल रही हैं।
जैसे बातियाँ नीराजनों की
तुलसी के चौरे पर।[9]

इन पंक्तियों में लोक–संस्कृति के साथ–ही–साथ लोक–संगीत का व्यापक प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। कवि की अनुभूतियों का क्षितिज व्यापक एवं बेजोड़ है। इसीलिए कवि ने जो कुछ भी लिखा है जन–जन तथा प्रकृति के कण–कण को आत्मसात् करके लिखा है। वाल्यावस्था में पहाड़ों और खेतों म सुने श्रम से चूर किसान मजदूर के गीतों के 'श्रमशील आशीर्वाद' को लेकर ही कवि गिलहरी की किच–किच में संगीत की मधुरता को सुन पाता है। यही कारण है कि कवि धरती की सोंधी गन्ध को महसूस करता है तथा श्रम के सीकरों का अभिनन्दन भी करता

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

है। खलिहान और अन्न क ढेर श्रम के परिणाम होने के कारण स्तुत्य हैं। श्रम के प्रति निष्ठा समाज की प्रगतिशील दृष्टि है–

"छोड़ो तुम निश्शंक / हर प्रभात में
चहकते हुए अपना नीड़
और लौटो शाम को
श्रम से महकते हुए / श्रान्त चरण।"[10]

उनकी दृढ़ आस्था है कि श्रमिक चाहे सर्वहारा कहा जाय किन्तु उसके पास श्रमशक्ति का ऐसा अजस्र कृोत है जो कभी रीता नहीं पड़ेगा और उसी के द्वारा हमारा दुर्भाग्य मिटकर स्वर्णिम भविष्य की रचना होगी। नई कविता के नाम पर जहाँ एक ओर अनास्था और अवसाद का बोलबाला है वहाँ उन्होंने आशा और आस्थायुक्त नवसंदेश ही दिया। सृजन की शक्ति उनमें अक्षुण्ण है, तभी तो हम उनमें नव आशा देखते हैं। वे अपने स्वर में समाज कण्ठ ध्वनि समन्वित करने में समर्थ सिद्ध हुए हैं। उनकी कविताओं में नये भारत का स्वप्न झलकता है–

"इसलिए हम चलें,
सावन में सँभाले खेत अपने,
बखर दें, बो दें, उगा दें,
आज इनमें नये सपने खिला दें,
गा, उठें इस जोर से,
आवाज जगती की गूंजा दें।"[11]

एक जागरुक कवि होने के कारण मिश्रजी अपने–आप को युग–प्रश्नों से अलग नहीं रख सके हैं। देश की विकसित स्थितियों का बड़ी तन्मयता और मनोयोग के साथ अध्ययन कर उन्होंने प्रत्येक दशा और काल की स्थिति पर व्यंग्य किया है। आपातकालीन सम्पूर्ण परिस्थितियों, समस्याओं एवं प्रश्नों को कवि ने दूर खड़े प्रेक्षक की तरह नहीं देखा वरन् उन्होंने इस आपातस्थिति की अन्तःपर्त्तों को जनता के सामने निर्भीकता से खोलकर रख दिया। इस सन्दर्भ में 'त्रिकाल–संध्या' की 'चार कौए उर्फ चार हौए' कविता काफी चर्चित हुई। स्वयं मिश्रजी ने इस कविता के विषय में अपनी टिप्पणी दी है–'इस कविता ने मेरे ऊपर वैसा ही उपकार किया है, जैसा 'गीतफरोश' ने किया था। पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं जिनमें 'आपातकाल' के लिए उत्तरदायी 'चाण्डाल चौकड़ी' के स्वरूप को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–

"बहुत नहीं थे सिर्फ / चार कौए थे काले,
उन्होंने यह तय किया कि सारे उड़नेवाले
उनके ढंग से उड़ें, रूकें, खाएँ और गाएँ,
वे जिनको त्योहार कहें, सब / उसे मनायें।"[12]

यहाँ चार कौए प्रतीक हैं –तत्कालीन प्रधानमंत्री (इन्दिरा गाँधी), राष्ट्रपति (डॉ फखरुद्दीन अली अहमद), संजय गाँधी तथा कांग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष (देवकांत बरुआ) का। इस कविता में व्यंग्य की गहराई बड़ी सजगता के साथ प्रस्तुत हुई है।

युग सत्य को उन्होंने बड़े ही मार्मिक और सरस बिम्बों में सजाकर प्रस्तुत किया है। आज की वर्ग विषमता और शोषण की प(ति को वे अस्वीकार करते हैं। कवि की संवेदना शोषितों के साथ है क्योंकि शोषित श्रमिक ही धन का वास्तविक स्वामी है। आज की समाज व्यवस्था की विडम्बना का पर्दाफाश करते हुए उन्होंने अमानवीय, असन्तुलित और अमर्यादित जिन्दगी पर तीखा व्यंग्यत्मक प्रहार किया है। 'दरिंदा' शीर्षक रचना में कवि की वाणी का ओज निम्न शब्दों में मुखर हो गया है–

"दरिंदा / आदमी की आवाज में /
बोला / मानवता थोड़ी बहुत जितनी भी थी /
ढेर हो गयी।"[13]

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

स्वराज–प्राप्ति के बाद भारत जिस तरह गाँधीजी के दिखाए मार्ग से विचलित हुआ और मोह भंग की स्थिति पैदा हुई तब कवि का हृदय भी पीड़ा से टीस उठा। 1959 में लिखी कविता 'कर्जे की चादर जितनी ओढ़ो उतनी कड़ी शीत है' में उन्होंने इस पीड़ा को उस समय अभिव्यक्ति दी थी जब विश्व बैंक से पहली बार कर्ज लेने की बात शुरु हुई थी–

पहले इतने बुरे नहीं थे तुम
याने इससे अधिक सही थे तुम
धुनक–पींज कर, कात–बीन कर
अपनी चादर खुद न बनाई
बल्कि दूर से कर्जे लेकर मंगाई
और नतीजा चाचा–भतीजा
दोनों के कल्पनातीत है
यह कर्जे की चादर जितना ओढ़ो
इतनी कड़ी शीत है।[14]

समाज का सर्वप्रमुख संवेदनशील अंग होने के कारण कवि समाज को आँख खोलकर देखता है तथा दूसरी ओर अपने मन पर होनेवाली प्रतिक्रिया को भी अनुभव करता है। कवि की शक्ति तथा सामर्थ्य प्रदर्शन का क्षेत्र कविता है। भवानीजी ने भी देश के युवकों को प्रेरणा दी है, जनमानस को मानसिक गुलामी की बेड़ियों में आबद्ध देखकर उसे उद्‌बुद्ध करना चाहा है। कवि का अपने देश से जो लगाव है, जो आत्मीयता है वह उनकी कविताओं में मुखर हो उठी है। उसने सारे देश को जाग्रत कर स्नेह की शक्ति से गुलामी की कड़ियों को तोड़ने का प्रयास किया है। देश की अखण्डता एवं एकता के लिए हिन्दी भाषा की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए उन्होंने उद्‌बोधन दिया है–

मेरे फूल बहुत बतियाना
अंग्रेजी में बंद करो
यदि माली समझा नहीं
निरर्थक मर जाओगे
और वह समझ गया तो
कलम तुम्हारी ही बाँधेगा
मगर वक्त के पहले ही
तुम झर जाओगे।[15]

समाज या राष्ट्र के जीवन में जब कोई मोड़ आता है तो वह मानव–मन को झकझोर कर नई गति देता है। उस समय भारत की सीमाओं पर हुए चीनी आक्रमण और उसके स्थायी वैमनस्य के प्रसंग ने देश को अभूतपूर्व चतना प्रदान की। चीनी आक्रमण के समय समाज के हृदय, कवि की लेखनी से आह्‌वान विषयक अनेक रचनाएँ निःसृत हुईं। प्रस्तुत राष्ट्र–संकट की स्थिति में भी कवि कर्त्तव्य के प्रति जागरूक रहा है। हमारा मार्ग सच्चा है तो कमर बाँधे। आचरण की बेला आ पहुँची है। जो हुआ सो हुआ, हमारा हौसला पस्त नहीं होना चाहिए। उस हार से जीत की प्रेरणा क्यों न लें? उनकी कविता में हमारा दृढ़ निश्चय, एक शक्तिशाली आस्था तथा आशा का सुनहला प्रातःकाल छिपा हुआ है–

प्यारा है सच से
तो अपने काम में उसको उतार
है बहुत मुमकिन
कि दो–एक बार तू जाएगा हार
जीत की लेकिन खिंचेगी
एक दिन तस्वीर मन

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8, Issue 12, December - 2018,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

तू किसे देगा अभ
जो कुछ हुआ दिलगीर मन।[16]

प्रेम मानव जीवन की एक सहज प्रवृत्ति है। मिश्रजी का प्रेम भी मानवीय निष्ठा से ओत–प्रोत है। उनके लिए प्रेम सिर्फ मन बहलाव का साधन नहीं, एक उत्कट साधना और नैष्ठिक तपस्या का प्रतीक है जिसकी शीतल छाया मन–प्राण में आनन्द और उत्साह का शाश्वत संचरण करती है। प्रणय के अनेक सामान्य तथा विशिष्ट पहलुओं को, उनकी सूक्ष्म अनुभूतियों तथा गहन मनोदशाओं को जिस वैविध्य एवं शतधा रूपरंजित अभिव्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया गया है उससे निश्चित ही हिन्दी काव्य गौरव दिशा की ओर अग्रसर हो सका है। इस नश्वर संसार में कवि प्रेम को अमर और स्पृहणीय मानता है। उसके लिए प्रेम संजीवनी बूटी रही है। प्रिय के आगमन के अहसास से ही उसकी सूनी दुनिया अचानक ही हरी–भरी हो उठती है–

तुम आए हो
इसलिए मन
किरण फूल आकाश
सभी कुछ सँभल गया है।[17]

सच तो यह है कि मिश्रजी के ज्ञवय में कवि का सम्पूर्ण व्यक्तित्व अपने कवि दायित्वों के साथ रूपायित हुआ है। आवेगों की सच्चाई और व्यंग्य का सचेष्टपन दर्शनीय है। कुछ कविताएँ प्रभावात्मक गरिमा से युक्त हैं तो कुछ अपनी जिजीविषा, सामाजिकता, उदात्तता और युगबोध के कारण समाज के बौ(कि वर्ग के बीच समादृत हैं। समग्र दृष्टि से सभी रचनाएँ कवि–व्यक्तित्व की दीर्घ अन्तर्यात्रा का जीवन्त आलेख–उसके संघर्ष और उपलब्धियों का सारभूत कलानुभव प्रकट करने वाली हैं। इन रचनाओं में खुरदुरापन और कटुता का अभाव ह। ये कविताएँ लोकजीवन की संवेदनाओं से प्रेरित होकर, लोकमंगल की भावना लिए, लोकधुनों के माधुर्य को संचारित करते हुए सामान्य जन तक पहुँचने में सक्षम हैं। उनकी भाषा आज की गुंफित तथा भाव–बुद्धि संकुल अनुभूति को अधिकाधिक सीमा तक सफलतापूर्वक अभिव्यक्त करने में समर्थ है। भारतीय संस्कृति और जीवन–मूल्यों के विविध पहलुओं पर आधृत उनकी कविताएँ मणिमाला की भाँति सुसज्जित हैं। इसमें विभिन्न रंग और आकारों को रूपायित करके आस्वाद्य स्थिति प्रदान की गई है।

सन्दर्भ सूची

1. साहित्य–सन्देश, नवम्बर, 1962, संपादक महेन्द्र, पृ. 183.
2. गीत–फरोश, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रथम संस्करण, 1956, पृ. 4.
3. गीत–फरोश, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रथम संस्करण, 1956, पृ. 10.
4. दूसरा सप्तक, संपा. अज्ञेय, पृ. 37.
5. गीत–फरोश, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 12.
6. चकित है दु:ख, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रथम संस्करण, 1968, पृ. 35.
7. बुनी हुई रस्सी, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रथम संस्करण, 1971, पृ. 11.
8. वही, पृ. 58.
9. खुशबू के शिलालेख, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, प्रथम संस्करण, 1973, पृ. 142.
10. बुनी हुई रस्सी, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 28.
11. गीतफरोश, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 75.
12. त्रिकाल–सन्ध्या, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, 1978, पृ. 26.
13. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि : पं. भवानी प्रसाद मिश्र, डॉ. विजय बहादुर सिंह, प्रथम संस्करण, पृ. 67.
14. इन्टरनेट सर्च
15. गाँधी पंचशतो, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 246.
16. साहित्य–संदेश चीनी आक्रमण संबंधी हिन्दी कविता, डॉ. शशि भूषण सिंहल, पृ. 235.
17. शरीर कविता फसलें और फूल, पं. भवानी प्रसाद मिश्र, पृ. 106.